हिंदी दिवस पर विशेष

हिंदी को राष्ट्रीय संस्कृति बननी होगी

डॉ. एम. डी. थॉमस

हिंदी दिवस

14 सितंबर एक बार फिर हमारे द्वार पर दस्तक दे रहा है। 1949 में ठीक इसी तारीख को हिंदी राष्ट्रभाषा घोषित हुई थी, इसकी याद एक बार फिर ताजा हो रही है। 'हिंदी दिवस', खास तौर पर केंद्र सरकार के कार्यालयों और संस्थाओं में तथा हिंदी संस्थानों में, एक अच्छा-खासा समारोह है। यह कुछ निजी प्रतिष्ठानों तथा हिंदी के विद्वानों के जमघटों में भी गोष्ठी-परिसंवाद का रूप लेता है। यह समारोह 'हिंदी सप्ताह' और 'हिंदी पखवाड़ा' के रूप में भी व्यापक हो गया है। 'हिंदी दिवस' की मूल परिकल्पना का अधूरा कार्य पूरा करने के संकल्प दिवस के रूप में यह अनुष्ठान आज भी प्रासंगिक है, इसमें कोई शक नहीं है।

हिंदीवाद की वर्तमान दशा

लेकिन, वर्तमान में हिंदीवाद एक जटिल मामला बन कर रह गया है। अधिकतर संदर्भों में इसका स्वरूप राजनीति से प्रभावित दिखायी देता है। कुछेक सरकारी कार्यालयों, निजी प्रतिष्ठानों तथा अहिंदी भाषी हिंदी प्रेमियों की सच्ची कोशिशों को छोड़कर हिंदीवाद केवल एक 'नारेबाजी' में सिकुड़ गया है। हिंदी के लिये बढ़-चढ़ कर बोलनेवालों में भी कुछ लोग हिंदी के खिलाफ व्यवहार करते हुए नजर आते हैं और कुछ लोग हिंदी की खातिर कुछ नहीं करते भी दिखायी देते हैं। इस विकृति ने हकीकत में हिंदीवाद को काफी नुक्सान पहुंचाया है। हिंदी 'हिंदी दिवस', 'हिंदी सप्ताह' आदि के सहारे नहीं जी सकती। हिंदीवाद को एक संतुलित, व्यापक और स्वस्थ धरातल पर स्थापित करना बेहद जरूरी है। तभी हिंदी की अहमियत एक भाषा, साहित्य, संस्कृति और जीवन-शैली के रूप में उज्ज्वल होकर उभरेगी। तभी हिंदीवाद का असली मकसद पूरा होगा।

हिंदी एक समृद्ध भाषा

भाषा अभिव्यक्ति का माध्यम है। अपने विचार दूसरों के सामने भली भांति प्रकट करना ही नहीं, दूसरों के विचार स्पष्टतया समझना भी भाषा का प्रयोजन है। इस माध्यम का दायरा जितना व्यापक है ठीक उतना ही मानव-समाज में एकता होगी। गुणवत्ता के साथ-साथ दायरा बढ़ाते जाना भी भाषा के विकास की अहम प्रक्रिया है और यह प्रक्रिया किसी समुदाय, देश या विश्व के स्तर पर सामाजिक सरोकार कायम करने का बुनियादी कारक भी है। हिंदी एक सक्षम और समर्थ भाषा है। यह एक मानक जीवन भाषा है। यह अनेक बोलियों के सॉम्मिश्रण से बनी है। इसमें अनेक क्षेत्रों की संस्कृतियों को आत्मसात् करने की अद्‌भुत क्षमता है। एक विचार को व्यक्त करने के लिये हिंदी में कई शब्द मिलते हैं। आलंकारिक शैली हिंदी की एक बड़ी खासियत है। काव्यात्मक स्वभाव की वजह से भी हिंदी एक समृद्ध भाषा है। हिंदी जनभाषा के रूप में आम लोगों की भाषा भी है।

हिंदी का विश्व रूप

हिंदी विश्व को भाषाओं मे अहम् जगह रखती है। बोलनेवालों की तादाद के विचार से हिंदी दुनिया की चौथी बड़ी भाषा है। हिंदी भारत के कुछ 40 फीसदी लोगों की मातृभाषा है। यह 60 से 70 फीसदी भारतीयों द्वारा पढ़ी, समझी और बोली जाती है। भारत में हिंदी जानने वालों की संख्या अंग्रेजी से कुछ पांच गुना अधिक है। संस्कृत के शब्दों के साथ-साथ अरबी-फारसी और अन्य कई देशी तथा विदेशी भाषाओ के शब्दों के मिलन से हिंदी में व्यापकता और कुशलता आयी है। खास तौर पर अरबी-फारसी के लफ्जों की बदौलत हिंदी काव्य विश्व के समूचे काव्यों में शुमार हुई है। पुरानी संस्कृत-सम्मत शैली की जगह हिंदी बेहद उर्दृ-सम्मत होती भी जा रही है। साथ ही, नागरी लिपि में वैज्ञानिक लिपि की विशेषताएँ मौजूद हैं। इस कारण यह भाषा अंतरराष्ट्रीय संदर्भ में भी मान्यता हासिल करती जा रही है। विश्व हिंदी सम्मेलनों के द्वारा विविध देशों के हिंदी विद्वानों को हिंदी की अंतर्राष्ट्रीय संभावनाओं को साकार करने के मंच भी मिलते हैं। हिंदी भाषा अपनी बहुतरे निहित खूबियों के कारण व्यापक स्तर पर आपसी सरोकार की एक सशक्त कड़ी के रूप में विकसित हो रही है।

राष्ट्र-भाषा हिंदी

राष्ट-भाषा के रूप में हिंदी स्वाधीनता का प्रतीक है। भारत की अपनी भाषा को राष्ट्र स्तर पर औपचारिक स्वीकृति मिलना अंग्रेजी दासता से मुक्ति पाने की निशानी है। हिंदी में स्वदेशी शासन का भाव झलकता है। हिंदी स्वदेशी विचारों, आचारों, वेश-भूषा तथा समूची जीवन-शैली का संवाहक है। इस रूप में हिंदी राष्ट्रीय पहचान एवं गौरव के चिन्ह के रूप में स्थापित है। हिंदी देश की एकता का प्रतीक भी है। यह 'एक देश, एक औपचारिक भाषा' के सूत्र का परिचायक है। जब हिंदी को राष्ट्र-भाषा का दर्जा मिला था तब हिंदी महज भारत की सबसे बड़ी भाषा थी। लेकिन, अब दक्षिण से लेकर उत्तर तक और पश्चिम से लेकर पूर्व तक भारत में पहले से कहीं बहुत ज्यादा हिंदी का प्रयोग हो रहा है। रेलवे का त्रिभाषा प्रयोग, हिंदी फिल्मों की लोकप्रियता, हिंदी प्रचार संस्थानों का प्रयास, रोजगार तथा सैर-सपाटे के लिये लोगों का प्रवास, आदि से वर्तमान समय में हिंदी बखूबी प्रचारित और लोकप्रिय हुई है, यह बात बेहद सराहनीय है। इस लिहाज से हिंदी का भविष्य उज्ज्वल है, इसमें दो राय नहीं है।

हिंदी की भूमिका

हिंदी की भूमिका को समझने के लिये 'हिंदू, हिंदी, हिंदुस्तान' के नारे को सही मायने में समझना होगा। 'हिंदी' इस नारे का केंद्र है। 'हिंदृ' किसी एक संप्रदायविशेष का द्योतक न होकर भारत के उन तमाम लोगों पर लागू होता है 'जो हिंदी बोलता हो या समझता हो'। हिंदुस्तान वह जगह है जहाँ राष्ट्रीय तौर पर हिंदी सीखी, समझी, बोली और लिखी जाती है'। इस अर्थ में हिंदी भारत है और भारत हिंदी है, ऐसा कहने में अतिशयोक्ति नज़र नहीं आती है। हिंदी सिर्फ एक भाषा नहीं, एक राष्ट्र, धर्म, संस्कृति और चिंतन का परिचायक है। लेकिन, हिंदी को 'भारत में सब की भाषा हिंदी हो' और हिंदी के अलावा और कोई भाषा न रहे, ऐसे खूबसूरत, आदर्शवादी और खोखले विचार के मायाजाल से बाहर आना होगा। हिंदी को व्यावहारिक होकर मुख्य भाषा होने के साथ-साथ एक संयोजक भाषा के रूप में उभरना होगा। एक सफल संजोजिका की भूमिका को निभाने से ही हिंदी पूरे भारत को एक सूत्र में बांध पायेगी। इसी में राष्ट्र-भाषा हिंदी का उज्ज्वल भविष्य है।

हिंदी और अंग्रेजी

हिंदी को राष्ट्र-भाषा के रूप में स्थापित करने व । मतलब यह नहीं है कि हिंदी अंग्रेजी का दुश्मन बन कर उसकी खिलाफत करे। करीब दो दशक पहले कुछ हिंदी प्रेमी अति-आवेश में आकर 'अंग्रेजी हटाओ, हिंदी बढ़ाओ' का नारा लगाते थे। अभी भी कई लोग अंग्रेजों और अंग्रेजी का भला-बुरा कहने में कोई कसर नहीं छोड़ते। परंतु यह

नकारात्मक रवैया बेतुक और हिंदी के लिये अहितकर है। अंग्रेजी को हटाने से हिंदी बढ़े, यह कतई जरूरी भी नहीं है। साथ ही, दबाये जाने से कोई चीज दबती नहीं है। अंग्रेजी को हटाने के लिए जितना प्रयास किया जा रहा है उतना प्रयास हिंदी के विकास के लिए किया जाए तो निश्चित ही हिंदी के लिये बेहतर होगा। दूसरी भाषा का विरोध करने से हिंदी को कतई फायदा नहीं है। अंग्रेजी भाषा के प्रति पूर्वाग्रह रखना हिंदी के हित में नहीं है। 'कौन विदेशी, कौन स्वदेशी' यह चर्चा भाषा के संदर्भ में शोभा नहीं होती है। भारत में अंग्रेजों की शासन तवारीख के पन्नों पर ही अंकित नहीं होकर भारत के कोने-कोने में जीवित है। हमें आदर्शात्मक रूख के स्थान पर यथार्थपरक रूख को अपनाना होगा। भाषा कोइ भी हो, अगर सीखी जाय तो एक नयी जनता और संस्कृति से जुड़ने में सहूलियत मिलेगी। भाषाएँ एक दूसरे की पूरक हैं और हिंदी और अंग्रेजी को इस कसौटी पर खरी उतरनी ही होगी।

अंग्रेजी तो हटने की बजाय अंतराष्ट्रीय और राष्ट्रीय दोनो स्तर पर लगातार बढ़ती रहती है। अंग्रेजी अंतरराष्ट्रीय संपर्क भाषा होने के साथ-साथ भारत की भी काफी हद तक संपर्क भाषा है। राष्ट्रीय स्तर पर काम चलाने के लिये भारत में हिंदी के साथ-साथ अंग्रेजी भी चाहिये। बोलने वालों को संख्या के आधार पर अंग्रेजी विश्व में प्रथम भाषा है। सिर्फ छब्बीस वर्णों की भाषा होने की वजह से सीखने, प्रयोग करने तथा प्रचलित होने में उसमें जो सुविधा है उसका कोई मुकाबला नहीं है। चिकित्सा, विज्ञान, प्रौद्योगिकी एवं यात्रिकी के क्षेत्र में अंग्रेजी का योगदान कतई भुलाया नहीं जा सकता है। भारत में अंग्रेजी माध्यम के राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय विद्यालयों की भरमार है। इतना ही नहीं, भूमण्डलीकरण के इस दौर में अंग्रेजी में झलकती अंतर्राष्ट्रीय विचारधारा और संस्कृति भी बेहद दुनिया वे लिए अनिवार्य लगता है। हिंदी के उज्ज्वल भविष्य के रास्ते में रोड़ा अंग्रेजी न होकर हिंदीभाषियों की कमजोर मानसिकता और हिंदी पर राजनीति का दुष्प्रभाव है और उसे दूर करना हिंदी की भलाई के मद्देनजर सख्त आवश्यक है।

हिंदी और प्रांतीय भाषाएँ

कुछ लोगों का सोचना है कि हिंदी के विकास में भारत की प्रांतीय भाषाएँ खतरा साबित होती हैं। लेकिन, प्रांतीय भाषाओं की अपनी-अपनी वजूद है और वे भारत की राष्ट्रीय पहचान के अभिन्न अंग हैं। प्रांतीय भाषाओं में प्रांतीय संस्कृतियाँ छिपी हुई हैं और प्रांतीय संस्कृतियों के समवाय में ही भारतीय संस्कृति की कल्पना पूरी होती है। प्रांतीय संस्कृतियों से मिलकर राष्ट्र-भाषा हिंदी एक 'साझी संस्कृति' का प्रतीक बन जाती है। इस लिये प्रांतीय भाषाओं का विकास और राष्ट्रभाषा हिंदी का विकास एक-दूसरे के पूरक हैं। प्रांतीय भाषाओं पर हिंदी को जबरन लादी नहीं जानी चाहिये। उत्तर भारत के कुछ प्रांतों को छोड़कर अन्य प्रांतों के लोगों के साथ सार्थक रूप से संपर्क करने के लिये वहाँ की भाषाएँ भी जरूरी ह। हिंदी को भारत की सभी प्रांतीय भाषाओं के साथ मैत्रीपूर्ण भाव बनाये रखना और उनके साथ कदम में कदम मिलाकर चलना होगा। राष्ट्रभाषा हिंदी को यथार्थपरक रवैया, राष्ट्रीय भावना और समन्वयवादी दृष्टिकोण को अपनाते हुए भारतीय संस्कृति व सर्व-समावशी रूप को निखारनी होगी। तभी हिंदी राष्ट्र-भाषा के रूप में राष्ट्र-संस्कृति बन सकेगी।

हिंदी का राष्ट्रीय स्वरूप

हिंदी की अस्मिता राष्ट्रीय मानसिकता को अपनाने में निहित है। भारत की सभी भाषाओं और बोलियों को अपनी समझने और उनके स्वतंत्र विकास के लिए वातावरण निर्मित करने में यह मानसिकता प्रतिफलित होती है। हिंदी को भारत के सभी धर्म-संप्रदायों के धर्मग्रन्थ, विचारधारा, जीवनदृष्टि, कला, जीवन-शैली, आदि को हिंदी भाषा और साहित्य के अंग बनाना होगा। भारत में जो कुछ है वह सब कुछ हिंदी में लाये जाये और उसे अपनापन प्रदान किया जाये, यह राष्ट्र-भाषा का दायित्व है। हिंदी को सर्वधर्म, सर्व-दर्शन और सर्व-संस्कृति भाषा के रूप में विकसित होना अभी भी शेष है। आजादी के चिन्हों में राष्ट्रभाषा के अलावा राष्ट्रध्वज और राष्ट्रगान भी है। इन चिन्हों को राष्ट्रीय

स्वीकृति देने के साथ-साथ ऐसी नीतियाँ बनायी जानी चाहिये जिनसे प्रांतीय भाषाओं के अच्छे तत्वों को हिंदी में और हिंदी की अच्छी चीजों को प्रांतीय भाषाओं में उपलब्ध किया जा सकें। हिंदो को राष्ट्रीय भावनाओं, विचारधाराओं और संस्कृतियों का संवाहक बनना होगा। भारत की एकता और अखंडता को बनाये रखने का यही एक कारगर रास्ता है।

हिंदी और अहिंदीभाषी

भारत और विदेश के गैर-हिंदीभाषी लोगों द्वारा हिंदी के लिये योगदान असल में बहुत ही निर्णायक और प्रशंसनीय रहा है। शब्दकोश, व्याकरण, आदि के निर्माण में विदेशी अग्रगण्य रहे। कतिपय भारतीय भाषाओं की लिपि भी विदेशियों का योगदान है। मिसाल के तौर पर, हिंदी के सबसे प्राचीन और प्रामाणिक व्याकरण दींशित्ज़ नामक रूसी विद्वान के नाम पर चलता है। कामिल बुलके द्वारा बनाये गये अंग्रेजी-हिंदी शब्दकोश की एक अहम् मान्यता है। प्रामाणिक किताबों और लेखों के अलावा साहित्य के विविध विधाओं में भी विदेशी हिंदी विद्वानों की उनकी रचनाएँ अनगिनत हैं। गैर-हिंदी मूल के भारतीय विद्वानों ने भी हिंदी को समृद्ध करने में काफी काम किया है। सैकड़ों की तादाद में गैर-हिंदीभाषियों ने हिंदी साहित्य के मौलिक विषयों पर शोध-प्रबंध तैयार कर मूल्यवान योगदान भी दिये हैं। हिंदी के त्रृटिरहित वर्तनो के साथ-साथ शुद्ध उच्चारण में अधिकांश अहिंदीभाषी विद्वान काबिल-ए-तारीफ हैं। अहिंदीभाषी तथा पश्चिमी विद्वानों के ज़रिये उनकी अपनी भाषा और संस्कृति के मेल से हिंदी की विचारधाराओं तथा संस्कृति में बड़ी मात्राओं में विकास, संतुलन तथा पूर्णता भी आयी है, इस को भुलाया नहीं जा सकता। ऐसी वैचारिक और सांस्कृतिक समन्वय, असल में, राष्ट्र-भाषा हिंदी की पूँजी है।

हिंदी और हिंदीभाषी

हिंदी की गरिमा के लिये हिंदीभाषियों में ही सर्वाधिक सुधार लाने की जरूरत है। हिंदी क्षेत्र में ऐसे बेशुमार नमूने पाये जाते हैं जहाँ हिंदी गलत लिखी जाती है। स्थानीय बोली के प्रभाव से बहुत हिंदीभाषी लोग, अध्यापक भी, कतिपय शब्दों का गलत उच्चारण करते हैं। बाजार में ही नहीं, कक्षाओं और अखबारों में भी, हिंदी का गलत प्रयोग देखने को मिलता है। गैर-हिंदीभाषियों से हिंदी के इस्तेमाल में कुछ गलतियाँ हो जाये तो ताज्जुब की कोई बात नहीं है। लेकिन, हिंदीभाषियों द्वारा अपनी ही भाषा में वर्तनी और उच्चारण की ये गलतियाँ वास्तव में अक्षम्य ही नहीं, शर्मनाक भी है। इतना ही नहीं, हिंदीभाषी लोगों में अंग्रेजी के प्रति जितना मोह दिखाई दे रहा है, उतना अन्य भाषाभाषियों में नहीं है। कतिपय लोगों की ऐसी नौबत है कि हिंदी में दी गयी बात का जवाब अंग्रेजी में मिलता है। कई हिंदीभाषियों की इस आदत से हिंदी का ही नहीं, उनका भी अपमान होता है जिनसे बातचीत होती है। साथ ही, हिंदी में बोलते समय बीच में कुछ शब्द, वक्यांश या वाक्य अंग्रेजी में बोलना हिंदी के लिये कहाँ प्रतिष्ठा की बात है? राष्ट्र-भाषा हिंदी को अपनी उचित गरिमा से युक्त करने के लिये हिंदीभाषियों में हिंदी के बोलने और लिखने में शुद्धता और हिदी की गुणवत्ता के प्रति प्रतिबद्धता लाने की जरूरत है। कहना पड़ रहा है कि इस के लिये हिंदीभाषियों में मानसिक बदलाव की सख्त आवश्यकता है।

हिंदी और विविध समुदायों की भाषाएँ

आखिर भारतीयता क्या है? भारत में द्रविड़ भी है, आर्य भी है। अलग-अलग जातियाँ, वर्ग, विचारधाराएँ, खान-पान, रहन-सहन, रीति-रिवाज, संस्कृतियाँ, आदि भारत देश के अंग हैं। ये बातें किसी-न-किसी समुदाय की पहचान भी बनी हुई है? जाहिर है कि भारत के मूल निवासी आदिवासी या जनजाति या द्रविड लोगों के पूर्वज थे। हिंदू समुदाय हजारों-हजारों साल पहले से भारत में मौजूद है। जैन समुदाय ईसा पूर्व नौवीं और छठी शती के बीच से, बौद्ध

समुदाय ईसा पूर्व छठी और चौथी शती के बीच से, यहूदी समुदाय ईसा पूर्व पांचवीं शती से, ईसाई समदाय पहली शती से और इस्लामी समुदाय सातवीं-आठवीं शती से, पारसी समुदाय ग्यारहवीं शती से, सिक्ख समुदाय सोलहवीं शती से बहाई समुदाय उन्नीसवीं शती से भारत में वजूद रखते हैं। उपर्युक्त सभी समुदायों की अपनी-अपनी परंपरागत भाषाएँ या बोलियाँ हैं। इन भाषाओं में तत्संबंधी समुदाय या परंपरा की विचारधारा और संस्कृति भी विद्यमान ह। इस कारण उन्हें बढ़ने का पूरा अधिकार है। इन भाषाओं का संप्रदायीकरण होना नहीं चाहिये। वरन, राष्ट्र-भाषा हिंदी को उन विचारधाराओं को आत्मसात कर अपनी सहज हृदय-विशालता का परिचय देना होगा। हिंदी का सुनहरा भविष्य भी इसी मानिसिकता में निहित है।

हिंदी और आम आदमी

भाषा शब्द का मूल अर्थ 'बोलना' है, जो कि संस्कृत के 'भाष्' धातु से निकलता है। भाषा इन्सान के विचार और भाव को इजहार करने का ज़रिया है। सभी भाषाएँ इन्सान की अभिव्यक्तियाँ हैं। सब भाषाओं का स्रोत भी मोटे तौर पर एक है। आम आदमी भाषा वे दैनिक प्रयोग का खास केंद्र है। उसकी भावना और भाषा को इस्तेमाल करने की उसकी क्षमता दोनों के अनुसार भाषा में तब्दीली आती रहती है। उदाहरण के लिये, उज्जैन की पवित्र नदी 'क्षिप्रा' शब्द का उच्चारण आम आदमी के लिये मुश्किल होने के कारण 'शिप्रा' शब्द प्रयोग में आया है। इसी प्रकार, अंग्रेजी शब्द 'ग्यारण्टी' के लिये समानांतर शब्द 'प्रत्याभूति' हिंदी में मौजूद होकर भी इस्तेमाल करने की सहूलियत को ध्यान में रखकर लोग 'अंग्रेजी शब्द 'ग्यारंटी' शब्द ही ज्यादातर बोलते हैं। खास रूप से आम आदमी के प्रयोग की सरलता के विचार से हिंदी में, अन्य भाषाओं में भी, काफी बदलाव आता हुआ दिखायी देता है। यह बात भाषा की जीवंतता का परिचायक है। इस संदर्भ में, विशाल दायरे को खुद में समेटनेवाली हिंदी को विशेष तौर पर आम आदमी की भाषा कहना समीचीन लगता है।

राष्ट्र-भाषा और 'वसुधैवकुटुंबकम्' की भावना

राष्ट्रभाषावाद की इमारत 'विविधता में एकता' के दर्शन की बुनियाद पर बनायी जानी चाहिये। इस दर्शन की रौशनी में भाषा-संबंधी नीतियों को लागू किया जाना चाहिये। नागरिकता, इन्सानियत, आदि किसी एक कौम की बपौती न होकर किसी देश या विश्व की सार्वभौम धरोहर है। खण्डित मानसिकता से गिरफ्त न होकर मानवतावाद का ध्येय रखना समाज की भलाई के लिये दरकार है। कट्टर राष्ट्रवाद राष्ट्र के विनाश का कारण बन सकता है। जाति, नस्ल, वर्ग, प्रदेश, मजहब, संप्रदाय, भाषा, विचारधारा, संस्कृति, आदि पर आधारित राष्ट्रवाद मानवता के खिलाफ है। जो देश के प्रति समर्पित है, उसे इन्सानियत के प्रति भी समर्पित होना चाहिये। हकीकत में, सब मनुष्य विश्व मानव समाज के नागरिक है। विश्व समुदाय के प्रति प्रतिबद्धता इन्सान होने के नाते पहला कार्य है। सभी राष्ट्र एक-दूसरे के पूरक हैं। राष्ट्रों को आपस में सहयोग करना चाहिए। समाज या देश की विभिन्न इकाइयों में आपसी निर्भरता, स्वीकृति तथा समन्वय से ही विश्व मानवता का कल्याण होगा। राष्ट्रों में आपसी सहभागिता और 'हम की भावना' हो तथा विभिन्न राष्ट्रों के दरमियान मानवीय-नैतिक-आध्यात्मिक मूल्यों को बढ़ावा मिले, यह मानव संस्कृति के लिये अहम् है। अलग-अलग दृष्टिकोणों के सम्मिश्रण से ही मानवता में समृद्धि आती है। आवश्यकता इस बात की है कि राष्ट्र और समुदाय श्रेष्ठता-हीनता की भावना से ऊपर उठें और विश्व समुदाय की भावना हासिल करें। ऐसी विशाल प्रतिबद्धता का नाम है 'वसुधैवकुटुम्बकम्'। इस आध्यात्मिक आदर्श में इन्सानियत की गरिमा निहित है। राष्ट्र-भाषा हिंदी पर ऐसी बुलंद ऊँचाई को छूने की जिम्मेदारी है।

हिंदी का सर्वसमावेशी स्वरूप

राष्ट्र-भाषा का सरकारीकरण या राजनीतिकरण गलत है। भाषा अपना स्वतंत्र वजूद रखे, विकास करे, एवं अन्य भाषाओं के साथ तालमेल रखे, यही विकास के तेरीके हैं। शिक्षा, संस्कृति, मानविकी, कृषि, विज्ञान, समाज, प्रशासन, विधि, उद्योग व तकनीकी, आदि क्षेत्रों में हिंदी के व्यवहार हेतु नवीन शब्दावली उपलब्ध हो गई है। ऐसी शब्दावली प्रांतीय भाषाओं में भी विव सित की जानी चाहिये। सभी प्रांतीय भाषाओं मे अपनी-अपनी विशिष्ट भाषाई तथा साहित्यिक विधियाँ हैं और उन्हें अन्य भाषाओं में उपलब्ध करवाना चाहिये। हिदी की विशिष्ट कृतियों को अन्य भाषाओं में अनूदित किया जाना चाहिये और अन्य भाषाओं की विशिष्ट कृतियों को हिंदी में भी। हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं में तथा अन्य भारतीय भाषाओं के आपस में पारिवारिक भावना रहे, यह हिंदी को सर्व समावेशी स्वभाव को बुलंद करने मे लिये बहद जरूरी है। हिंदी को खण्डित मानसिकता से पूरी तरह से अछूता रहकर समूचे भारत और उसकी सभी सच्चाइयों को समेटने का कद हासिल करना होगा।

हिंदी एक राष्ट्रीय संस्कृति

हिंदी को हिंदीभाषियों की निजी बपौती नहीं समझी जानी चाहिये। गाँधी टोपी को भारतीयता की पहचान हासिल हुई है। लेकिन वह मध्यपूर्व से आयी है। पाइजामा-कुर्ता भारतीय पोशाक मानी जाती है। लेकिन, वह फारस से आया। आधुनिक हिंदी में अरबी-फारसी से आये उर्दू शब्दों का भरमार है। आखिर, भाषा कला संकाय में शामिल है। वह संस्कृति का अंग भी है। वह किसी भी संस्कृति में प्रवेश करने का द्वार है। वह सबकी है और उस पर किसी का संकीर्ण दावा न होना चाहिये। साथ ही, भाषा संस्कृति का प्रतीक भी है। हिंदी सिर्फ एक भाषा न होकर एक संस्कृति है। उसे प्रदेश, प्रांत, समुदाय, देश, आदि की चहारदीवारियों में बाँटा नहीं जाना चाहिये। भाषा आपसी बातचीत, सरोकार और रिश्ते का ज़रिया है। वह इन्सान के विश्व समाज का धरोहर है। देश और विश्व के स्तर पर सहयोगात्मक रवैये को कायम रखने में भाषा की प्रासंगिकता है। यह अपने आप में एक तहजीब है। समन्वयवादी दृष्टि, तालमेल की मानसिकता और आपसी सम्मान इस तहजीब के महत्वपूर्ण अंग हैं। राष्ट्र-भाषा के रूप में वह भारतीय संस्कृति का प्रतिनिधित्व करती ही नहीं, विश्व मानव संस्कृति में सहभागिता रखती और उसे अपने अनूठे योगदान से समृद्‌ध करती भी है। इस अर्थ में, राष्ट्रभाषा हिंदी को राष्ट्रीय संस्कृति बननी होगी।

डॉ. एम. डी. थॉमस
संस्थापक निदेशक, इंस्टिट्यूट ऑफ़ हार्मनि एण्ड पीस स्टडीज़, नयी दिल्ली
प्रथम मंजिल, ए 128, सेक्टर 19, सेक्टर 19, द्वारका, नयी दिल्ली 110075

दूरभाष: 09810535378 (p), 08847925378 (p), 011-45575378 (o)
ईमेल : mdthomas53@gmail.com (p), ihps2014@gmail.com (o)
बेबसाइट: www.mdthomas.in (p), www.ihpsindia.org (o)

Twitter: https://twitter.com/mdthomas53
Facebook: https://www.facebook.com/mdthomas53
Academia.edu: https://independent.academia.edu/MDTHOMAS